कक्षा : गयारहवीं , गद्य खंड

"कविता की परख"

Dr. Nand Kishore Pandit

Asst. Prof. Hindi

APSM College, Barauni

कविता की परख

---- आचार्य रामचंद्र शुक्ल

कविता का उद्देश्य हमारे हृदय पर प्रभाव डालना होता है, जिससे उसके भीतर प्रेम, आनन्द ,हास्य, करुणा, उत्साह, आश्चर्य इत्यादि अनेक भावों में से किसी का संचार हो। जिस पद्य में इस प्रकार प्रभाव डालने की शक्ति न हो, उसे कविता नहीं कह सकते। ऐसा प्रभाव उत्पन्न करने के लिए कविता पहले कुछ रूप और व्यापार हमारे मन में इस ढंग से खडाकरती है कि हमें यह प्रतीत होने लगता है कि वे हमारे सामने उपस्थित हैं। जिस मानसिक शक्ति से कवि ऐसी वस्तुओं और व्यापारों की योजना करता है और हम अपने मन में उन्हें धारण करते हैं, वह कल्पना कहलाती है। इस शक्ति के बिना न तो अच्छी कविता ही हो सकती है, न उसका पूरा आनन्द ही लिया जा सकता है। सृष्टि में हम देखते हैं कि भिन्न भिन्न प्रकार की वस्तुओं को देखकर हमारे मन पर भिन्न भिन्न प्रकार का प्रभाव पड़ता है। किसी सुन्दर वस्तु को देखकर हम प्रफुल्ल हो जाते हैं, किसी अद्‌भुत वस्तु या व्यापार को देखकर आश्चर्यमग्न हो जाते हैं, किसी दु:ख के दारुण दृश्य को देखकर करुणा से आर्द्र हो जाते हैं। यही बात कविता में भी होती है।

जिस भाव का उदय कवि को पाठक के मन में कराना होता है, उसी भाव को जगानेवाले रूप और व्यापार वह अपने वर्णन द्वारा पाठक के मन में लाता है। यदि सौन्दर्य की भावना उत्पन्न करके मन को प्रफुल्ल और आह्लादित करना होता है तो कवि किसी सुन्दर व्यक्ति अथवा किसी सुन्दर और रमणीय स्थल का शब्दों द्वारा चित्रण करता है। सूरदासजी ने श्रीकृष्ण के अंग-प्रत्यंग का जो वर्णन किया है उसे पढ़कर या सुनकर मन सौन्दर्य की भावना में लीन हो जाता है। गोस्वामी तुलसीदासजी की गीतावली में चित्रकूट का यह वर्णन कितनी सुन्दरता हमारे समक्ष लाता है।

“सोहत स्याम जलद मृदु घोरत धातु रंगमगे ऋंगनि।”

इसी प्रकार भय का भाव उत्पन्न करने के लिए कवि जो रूप सामने रखेंगा वह बहुत ही विकाराल होगा। जैसा कुंभकरण का रूप रामचरितमानस में है। राम के वनगमन पर अयोधया की दशा का जो वर्णन रामायण में है, उससे किसका हृदय दु:ख और करुणा का अनुभव न करेगा ?

अपने वर्णनों में कवि लोग उपमा आदि का भी सहारा लिया करते हैं। वे, जिस वस्तु के वर्णन का प्रसंग होता है, उस वस्तु के समान कुछ और वस्तुओं का उल्लेख भी किया करते हैं; जैसे- मुख को चंद्र या कमल के समान, नेत्रों को मीन, व्यं जन, कमल आदि के समान। प्रतापी या तेजस्वी को सूर्य के समान; कायर को ऋगाल के समान, वीर और पराक्रमी को सिंह के समान प्राय: कहा करते हैं। ऐसा कहने में उनका वास्तविक लक्ष्य यही होता है कि जिस वस्तु का वे वर्णन कर रहे हैं, उसकी सुन्दरता, कोमलता, मधुरता या उग्रता, कठोरता, भीषणता, वीरता, कायरता इत्यादि की भावना और तीव्र हो जायँ। किसी के मुख की मधुर कान्ति की भावना

उत्पन्न करने के लिए कवि उस मुख के साथ एक और अत्यन्त मधुर कान्तिवाला दूसरा पदार्थ-चन्द्रमा भी रख देता है, जिससे मधुर कान्ति की भावना और भी बढ़ जाती है। सारांश यह है कि उपमा का उद्देश्य भावना को तीव्र करना ही होता है, किसी वस्तु का बोध या परिज्ञान कराना नहीं। बोध या परिज्ञान कराने के लिए भी एक वस्तु को दूसरी वस्तु के समान कह देते हैं, जैसे-जिसने हारमोनियम बाजा न देखा हो-उससे कहना, "अजी! वह सन्दूक के समान होता है।" पर इस प्रकार की समानता उपमा नहीं।

कोई उपमा कैसी है, इसके निर्णय के लिए पहले तो यह देखा जाता है कि कवि किस वस्तु का वास्तव में वर्णन कर रहा है और उस वर्णन द्वारा उस वस्तु के सम्बन्ध में कैसी भावना उत्पन्न करना चाहता है। उसके पीछे इसका विचार होता है कि उपमा के लिए जो वस्तु लाई गई है, उससे वही भावना उत्पन्न होती है और बहुत अधिक परिमाण में, तो उपमा अच्छी कही जाती है। केवल आकार, छोटाई बड़ाई आदि में ही समानता देखकर अच्छे कवि उपमा नहीं दिया करते। वे प्रभाव की समानता देखते हैं, जैसे यदि कोई आकार और बड़ाई को ही ध्याचन में रखकर आँख की उपमा बादाम या आम की फाँक से दे तो उसकी उपमा भद्दी होगी क्योंकि उक्त वस्तुओं से सौन्दर्य की भावना वैसी नहीं जगती। कवि लोग आँख की उपमा के लिए कभी कमल दल लाते हैं, जिससे रंग की मनोहरता, प्रफुल्लता, कोमलता आदि की भावना एक साथ उत्पन्न होती है; कभी मीन या व्यंमजन लाते हैं, जिससे स्वच्छता और चंचलता प्रकट होती है, उठे हुए बादल के टुकड़े के ऊपर उदित होते हुए पूर्ण चन्द्रमा का दृश्य कितना रमणीय होता है! यदि कोई उसे देखकर कहे कि 'मानो ऊँट की पीठ पर घंटा रखा है' तो यह उक्ति रमणीयता की भावना में कुछ भी योग न देगी, थोड़ा बहुत कुतूहल चाहे भले ही उत्पन्न करदे।

कवि लोग प्रेम, शोक, करुणा, आश्चर्य, भय, उत्साह इत्यादि भावों को पात्रों के मुँह से प्राय: प्रकट कराया करते हैं। वाणी के द्वारा मनुष्य के हृदय के भावों की पूर्ण रूप से व्यंजना हो सकती है। मनुष्य के मुख से प्रेम में कैसे वचन निकलते हैं, क्रोध में कैसे, शोक में कैसे, आश्चर्य में कैसे, उत्साह में कैसे इसका अनुभव सच्चे कवियों को पूरा पूरा होता है। शोक के वेग में मनुष्य थोड़ी देर के लिए बुध्दि और विवेक भूल जाता है, उचित अनुचित का ध्या न छोड़ देता है। इसी बात को दृष्टि में रखकर तुलसीदासजी ने लक्ष्मण के शक्ति लगने पर राम के मुँह से कहलाया है कि-

"जौ जनतेउँ बन बन्धु बिछोहू। पिता वचन मनतेउँ नहिं ओहूड्ड"

जो काव्य के सिध्दान्तों को नहीं जानते वे कहेंगे कि इस वचन से राम के चरित्र में दूषण आ गया। पर जो सहृदय और मर्मज्ञ हैं, वे इसे शोक की उक्ति मात्र समझेंगे।

पात्र के मुख से भाव की व्यंजना कराने में कवि में बड़ी निपुणता अपेक्षित होती है। पहले तो उसे मनुष्य की सामान्य प्रकृति का ध्या न रखना पड़ता है, फिर पात्र के विशेष ढंग के स्वभाव का। इसी से एक ही भाव की व्यंजना अनन्त प्रकार से हो सकती है। रामचरितमानस में देखिए कि राम जब कभी अपना क्रोध प्रकट करते हैं, तब किस संयम और गंभीरता के साथ, और लक्ष्मण किस अधीरता और उग्रता के साथ। यही बात उत्साह आदि और भावों के सम्बन्ध में भी समझनी चाहिए।